

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 2 अध्याय 8: राजा परीक्षित ऋषि शुक से विविध प्रश्न पूछते हैं

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



गंगा-तट पर, जीवन के शेष सात दिनों के साथ, राजा परीक्षित अपने हृदय की समस्त जिज्ञासा ऋषि शुक के समक्ष रख देते हैं — एक प्रश्न से दूसरे प्रश्न में प्रवाहित होते हुए, मानो कोई नदी सागर की ओर बढ़ रही हो।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

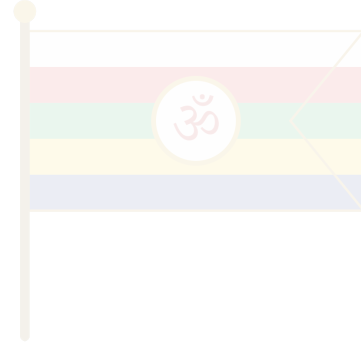
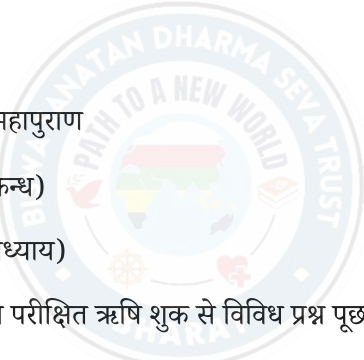
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पूर्व अध्यायों में हमने श्रीशुकदेव गोस्वामी के उस वृत्तान्त का अनुसरण किया, जिसमें प्राचीन ऋषि नारद ने अपने पिता ब्रह्मा से प्रश्न किए थे, और ब्रह्मा ने तीन गुणों से लेकर विराट् पुरुष के उस विशाल स्वरूप तक, जिसमें चौदह लोक उनके अंगों में समाहित हैं, सृष्टि के क्रम-विकास का वर्णन किया। इतना सुनने के पश्चात्, राजा परीक्षित — जो गंगा-तट पर, एक ब्राह्मण के शाप के अन्तर्गत जीवन के केवल सात दिन शेष रहते बैठे हैं — अब और प्रतीक्षा नहीं कर सकते। यह अष्टम अध्याय पूर्णतः उन्हीं का है। यह उनका वह क्षण है जब वे बिना किसी संकोच के, वह सब कुछ पूछते हैं जो वे सदैव जानना चाहते थे: काल तथा उसके विशाल कल्पों के विषय में, पृथ्वी तथा उससे परे के लोकों के विषय में, वेदों तथा युगों के विषय में, योग तथा उसके लक्ष्य के विषय में, बन्धन तथा मुक्ति के विषय में, और सबसे बढ़कर, मृत्यु के समय मन को भगवान् में कैसे स्थिर किया जाए इस विषय में। यहाँ हमें कोई उत्तर नहीं, अपितु एक प्रश्न प्राप्त होता है — भव्य, व्यापक, तथा पूर्णतः निष्कपट — जो ऋषि शुक को इस महान् शास्त्र के शेष भाग तक व्यस्त रखेगा।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 2 (द्वितीय स्कन्ध)
- अध्याय: 8 (अष्टम अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: राजा परीक्षित ऋषि शुक से विविध प्रश्न पूछते हैं
- मुख्य वक्ता: राजा परीक्षित (श्रीशुकदेव गोस्वामी से अपने प्रश्न पूछते हुए); सूत गोस्वामी अध्याय का समापन करते हैं, नैमिषारण्य के ऋषियों को सुनाते हुए
- मुख्य श्रोता: श्रीशुकदेव गोस्वामी (कथित दृश्य के भीतर); ऋषि शौनक एवं नैमिषारण्य का ऋषि-समुदाय (सूतजी से सुनते हुए)
- मुख्य स्थान: गंगा नदी का तट, जहाँ राजा परीक्षित उपवास करते हुए, मृत्यु की प्रतीक्षा में, श्रीशुकदेव गोस्वामी तथा ऋषियों के एक विशाल समुदाय के साथ बैठे हैं
- मुख्य विषय-वस्तु: परीक्षित के शुक से किए गए विस्तृत प्रश्न — जिनमें भागवत की उत्पत्ति, आत्मा तथा विराट् पुरुष का स्वरूप, काल तथा कल्प, ब्रह्माण्ड-विज्ञान, युग तथा भगवान् के अवतार, मनुष्यों के कर्तव्य, तत्त्व तथा योग, वेद तथा शास्त्र, सृष्टि-चक्र, और बन्धन, मुक्ति एवं भगवान् की अपनी माया का रहस्य सम्मिलित हैं
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 1-29
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



भागवत के विषय में एक राजा का प्रश्न

अध्याय का आरम्भ ब्रह्माण्ड-विज्ञान से नहीं, अपितु उस शिक्षा के विषय में जिज्ञासा से होता है जिसके अस्तित्व की सूचना परीक्षित को अभी-अभी मिली है। उन्होंने सुना है कि नारद ने कभी ब्रह्मा के आग्रह पर, तीन गुणों से परे भगवान् की महिमाओं की घोषणा की थी — किन्तु नारद ने यह किसके समक्ष कहा, और किस प्रकार? परीक्षित सीधे शुक से यह प्रश्न पूछते हैं, उन्हें सत्य के ज्ञाताओं में अग्रणी कहते हुए, क्योंकि श्रीहरि की कथाएँ, वे कहते हैं, सम्पूर्ण संसार के लिए कल्याणकारी हैं।

राजोवाच

ब्रह्मणा चोदितो ब्रह्मन् गुणाख्यानेऽगुणस्य च ।

यस्मै यस्मै यथा प्राह नारदो देवदर्शनः ॥ १ ॥

rājovāca brahmaṇā codito brahman guṇākhyāṇe 'guṇasya ca yasmai yasmai yathā prāha nārado deva-darśanaḥ

अर्थ: राजा ने कहा: हे विद्वान् ब्राह्मण, जब ब्रह्मा ने नारद को — जिनकी दृष्टि देवताओं तक पहुँचती है — गुणों से परे भगवान् की महिमाओं की घोषणा करने का आग्रह किया, तो नारद ने किसके समक्ष, और किस प्रकार, उनका वर्णन किया? (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 1)

किन्तु राजा की गहरी चिन्ता शीघ्र ही प्रकट होती है। वे केवल शास्त्र के विषय में जिज्ञासु नहीं हैं; वे मृत्यु के लिए तैयार हो रहे हैं। वे पूछते हैं, शरीर त्यागने से पूर्व के अन्तिम क्षणों में, आत्मा को — समस्त आसक्ति से मुक्त होकर — विश्व की आत्मा श्रीकृष्ण में कैसे स्थिर किया जाए? इसका उत्तर, यद्यपि आने वाले अनेक अध्यायों में क्रमशः प्रकट होगा, परीक्षित के अपने ही शब्दों में यहाँ पूर्वाभासित है।

शृण्वतः श्रद्धया नित्यं गृणतश्च स्वचेष्टितम् ।

कालेन नातिदीर्घेण भगवान् विशते हृदि ॥ ४ ॥

śṛṇvataḥ śraddhayā nityaṁ gṛṇataś ca sva-ceṣṭitam kālena nātidīrghēṇa bhagavān viśate hṛdi

अर्थ: जो व्यक्ति प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक भगवान् की लीलाएँ सुनता है, तथा स्वयं भी उनका वर्णन करता है, वह शीघ्र ही — बिना अधिक समय लगे — भगवान् को अपने हृदय में निवास करते हुए पाता है। (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 4)

कान के मार्ग से एक खुले द्वार की भाँति प्रवेश करते हुए, भगवान् उस हृदय को समस्त मलिनता से मुक्त कर देते हैं — जैसे शरद ऋतु तालाब के गँदले जल को निर्मल कर देती है। इस प्रकार शुद्ध हुआ हृदय पुनः कभी उनके चरणों की शरण नहीं छोड़ता, राजा कहते हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक थका हुआ यात्री, लम्बी तथा कठिन यात्रा से घर लौटकर, अपनी छत छोड़ने की इच्छा नहीं करता।



राजा परीक्षित, अपने जीवन के अन्तिम दिनों में गंगा-तट पर बैठे हुए, श्रीशुकदेव गोस्वामी से पूछते हैं कि मृत्यु से पूर्व मन को भगवान् में कैसे स्थिर किया जाए (श्लोक 1-6)।

आत्मा, शरीर, तथा विराट् पुरुष

इस मृत्युकालीन व्याकुलता से, परीक्षित का मन उस पहेली की ओर मुड़ता है जो स्पष्टतः पूर्व अध्यायों से उन्हें व्याकुल कर रही है: आत्मा, जिसका पदार्थ से कोई वास्तविक सम्बन्ध नहीं, वह पदार्थ से बने शरीर के साथ इतनी पूर्णता से अपनी पहचान कैसे बना लेती है? क्या यह संयोगवश होता है, वे पूछते हैं, अथवा यह कर्म में निहित किसी कारण से होता है? वे उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना एक और भी बड़ी पहेली की ओर बढ़ते हैं — विराट् पुरुष के उस स्वरूप की ओर जिसका वर्णन पूर्व में ब्रह्मा ने किया था। भगवान् की अपनी नाभि-कमल से, परीक्षित स्मरण करते हैं, वह कमल प्रकट हुआ जिसमें समस्त लोकों की व्यवस्था समाहित है; और स्वयं भगवान् का वर्णन उन्हीं अंगों तथा उसी अनुपात में किया गया है जैसे एक सामान्य मनुष्य का — केवल उनका माप समस्त सीमाओं से परे विशाल है।

अजः सृजति भूतानि भूतात्मा यदनुग्रहात् ।

ददृशे येन तद्रूपं नाभिपद्मसमुद्भवः ॥ ९ ॥

ajāḥ sṛjati bhūtāni bhūtātmā yad-anugrahāt dadṛśe yena tad-rūpaṁ nābhi-padma-samudbhavaḥ

अर्थ: यह केवल भगवान् की कृपा से ही है कि ब्रह्मा — वह अजन्मा, नाभि-कमल से उत्पन्न, स्वयं समस्त प्राणियों की समष्टि-आत्मा — समस्त प्राणियों की रचना करते हैं, और उसी कृपा से वे भगवान् के उस स्वरूप का दर्शन कर पाए। (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 9)

तत्पश्चात् अध्याय के सर्वाधिक चौंकाने वाले प्रश्नों में से एक आता है, और एक अर्थ में यही इस अध्याय का वास्तविक केन्द्र-बिन्दु है: अपनी माया का आवरण हटाने के पश्चात्, वह परम पुरुष — माया के स्वामी, समस्त हृदयों के अन्तर्यामी, ब्रह्माण्ड की सृष्टि, पालन तथा संहार के स्रोत — वस्तुतः कहाँ विश्राम करते हैं? यह एक ऐसा प्रश्न है जो भगवान् के प्रत्येक दृश्य स्वरूप से परे देखकर पूछता है कि जब दिव्य प्रदर्शन को भी अलग रख दिया जाए, तो क्या शेष रहता है। परीक्षित यह भी जोड़ते हैं कि उन्होंने पहले ही सुना है कि विभिन्न लोक, उनके अधिष्ठाता देवताओं सहित, उस परम पुरुष के अंगों में स्थित माने गए हैं — किन्तु वे यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कि उन्होंने इसे भाग-दर-भाग सही ढंग से समझा है।



परीक्षित विराट् पुरुष पर विचार करते हैं, जिनके अंगों में चौदह लोक स्थित बताए गए हैं, और पूछते हैं कि अपनी माया का आवरण हटाने के पश्चात् भगवान् कहाँ विश्राम करते हैं (श्लोक 7-11)।

काल, कर्म, तथा ब्रह्माण्ड का स्वरूप

आत्मा तथा विराट् पुरुष के रहस्य को स्पर्श करने के पश्चात्, परीक्षित के प्रश्न अब उस ब्रह्माण्ड के व्यापक सर्वेक्षण की ओर विस्तृत होते हैं जिसमें वे निवास करते हैं। वे यह जानना चाहते हैं कि एक महाकल्प तथा उसके भीतर समाहित छोटे कल्पों की अवधि क्या है, तथा “भूत,” “भविष्य,” तथा “वर्तमान” शब्दों द्वारा निर्दिष्ट काल का वह माप क्या है जिससे समस्त सृजित प्राणियों की आयु निर्धारित होती है। वे यह समझना चाहते हैं कि देहधारी आत्माओं द्वारा किए गए विभिन्न कर्मों के सन्दर्भ में, काल की सूक्ष्म तथा स्थूल गतियाँ — चाहे कितनी भी छोटी अथवा बड़ी हों — कैसे अनुभव की जा सकती हैं। और वे कर्म के संचय के विषय में पूछते हैं — यह कैसे, तथा किसके द्वारा, ग्रहण किया जाता है, तथा यह गुणों एवं उन्हें धारण करने वाले प्राणियों के परिणामों को कैसे प्रेरित करता है।

यावान् कल्पोविकल्पो वा यथा कालोऽनुमीयते ।

भूतभव्यभवच्छब्द आयुर्मानं च यत् सतः ॥ १२ ॥

yāvān kalpo vikalpo vā yathā kālo 'numīyate bhūta-bhavya-bhavac-chabda āyur-mānaṁ ca yat sataḥ

अर्थ: एक कल्प तथा उसके उपविभागों का माप क्या है? और “भूत,” “भविष्य,” तथा “वर्तमान” शब्दों द्वारा काल की गणना किस प्रकार की जाती है, तथा प्रत्येक सृजित प्राणी की आयु किस प्रकार निर्धारित होती है? (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 12)

काल से, परीक्षित अन्तरिक्ष की ओर मुड़ते हैं: पृथ्वी तथा पाताल, अधोवर्ती लोक, आकाश की चार दिशाएँ, आकाश, ग्रह, तारे, पर्वत, नदियाँ, समुद्र, तथा द्वीप, उनमें निवास करने वाले प्राणियों सहित, कैसे अस्तित्व में आते हैं? और ब्रह्माण्ड-अण्ड का माप, उसके बाह्य तथा आन्तरिक विभाजनों के अनुसार, क्या है — साथ ही उसके भीतर निवास करने वाले महान् आत्माओं के कर्म, तथा वर्णों एवं आश्रमों, अर्थात् समाज की श्रेणियों तथा जीवन की अवस्थाओं की, निश्चित व्यवस्था क्या है?



राजा कल्पों तथा काल के माप के विषय में, तथा उस विशाल ब्रह्माण्ड-अण्ड के विषय में पूछते हैं जिसमें पृथ्वी, पाताल, ग्रह, तथा मध्यवर्ती समस्त लोक समाहित हैं (श्लोक 12-16)।

युग, अवतार, तथा मनुष्यों के कर्तव्य

परीक्षित की जिज्ञासा अब इतिहास तथा मानव-जीवन की ओर मुड़ती है। वे विभिन्न युगों — विश्व के महान् कालखण्डों — की अवधि तथा प्रत्येक के लिए निर्धारित कर्तव्यों की संहिता पूछते हैं; तथा वे स्पष्ट उत्कण्ठा के साथ, श्रीहरि के उन अद्भुत अवतारों की कथाएँ सुनना चाहते हैं जो युग-प्रतियुग इस संसार में हुए। यह वस्तुतः उस सब कुछ के लिए अनुरोध है जिसे भागवत के परवर्ती स्कन्ध पूर्णता से प्रदान करेंगे: भगवान् के अवतार, एक के पश्चात् एक, बदलते युगों के माध्यम से।

इसके साथ ही, राजा मनुष्य-कर्तव्य के स्वरूप को समझना चाहते हैं — जो सभी मनुष्यों के लिए सामान्य है, और जो विशेष वर्गों के लिए विशिष्ट है; धर्मात्मा राजाओं के विशेष कर्तव्य, तथा विपत्तिपूर्ण परिस्थितियों में जीने वालों के उचित कर्तव्य।

नृणां साधारणो धर्मः सविशेषश्च यादृशः ।

श्रेणीनां राजर्षीणां च धर्मः कृच्छ्रेषु जीवताम् ॥ १८ ॥

nṛṇāṃ sādharmaṇo dharmah saviśeṣaś ca yādṛśaḥ śreṇīnāṃ rājarṣīṇāṃ ca dharmah kṛcchreṣu jīvataṃ

अर्थ: समस्त मनुष्यों के लिए सामान्य धर्म क्या है, तथा विशेष वर्गों के लिए विशिष्ट धर्म क्या है; धर्मात्मा राजाओं का धर्म क्या है; तथा विपत्तिपूर्ण परिस्थितियों में जीने वालों का धर्म क्या है? (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 18)



परीक्षित विश्व के कालखण्डों तथा उनमें भगवान् के अनेक अवतारों की कथाएँ सुनने की, तथा मानव-जीवन के विभिन्न वर्गों एवं परिस्थितियों के उचित कर्तव्यों की, इच्छा व्यक्त करते हैं (श्लोक 17-18)।

तत्त्व, योग, तथा महान् शास्त्र

अब राजा के प्रश्न अन्तर्मुखी होते हैं, उन साधनाओं की ओर जिनसे आत्मा सीधे भगवान् की खोज करती है। वे तत्त्वों — अस्तित्व की परम श्रेणियों — का उनके विशिष्ट लक्षणों तथा कारण-सम्बन्धों सहित वर्णन पूछते हैं, तथा परम पुरुष एवं अन्य देवताओं की समुचित उपासना-विधियों की व्याख्या माँगते हैं। वे विशेष रूप से ऋषि पतञ्जलि द्वारा सिखाए गए अष्टांग योग का नाम लेते हैं, तथा पूछते हैं कि एक महान् योगेश्वर उससे कौन-सी सिद्धियाँ प्राप्त करता है, उस साधना का अन्तिम लक्ष्य क्या है, तथा मार्ग के अन्त में योगी का सूक्ष्म शरीर कैसे विलीन होता है।

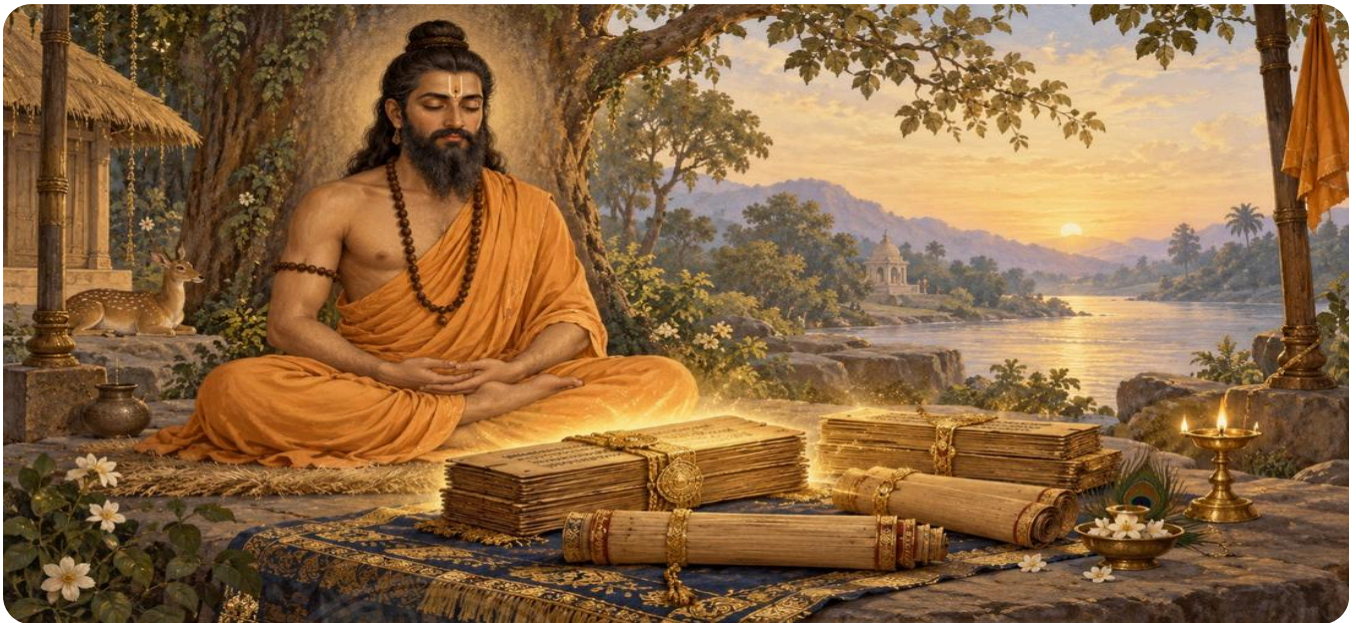
उनके प्रश्न पुनः विस्तृत होकर सम्पूर्ण पवित्र ज्ञान की सम्पूर्ण संरचना को समाहित करते हैं: वेदों तथा उनकी उपशाखाओं जैसे आयुर्वेद, चिकित्सा-विज्ञान, की विशिष्ट प्रकृति; धर्मशास्त्र, विधि-ग्रन्थ; तथा इतिहास एवं पुराण, महान् महाकाव्य तथा गाथाएँ। वे पूछते हैं कि समस्त प्राणियों की सृष्टि, पालन, तथा संहार कैसे होते हैं, तथा वैदिक अनुष्ठानों एवं स्मृति-ग्रन्थों में अनुशंसित कर्मों — कुएँ तथा तालाब खोदना, मन्दिर तथा उद्यान बनवाना, अन्नदान करना — के साथ-साथ किसी व्यक्तिगत इच्छा से प्रेरित कर्मों को सम्पन्न करने की विधि क्या है। और वे जीवन के तीन वैध लक्ष्यों — धर्म, अर्थ, तथा काम — को प्राप्त करने की निर्दोष विधि पूछते हैं।

सम्प्लवः सर्वभूतानां विक्रमः प्रतिसंक्रमः ।

इष्टापूर्तस्य काम्यानां त्रिवर्गस्य च यो विधिः ॥ २१ ॥

samplavaḥ sarva-bhūtānāṃ vikramaḥ pratisaṅkramaḥ iṣṭā-pūrtasya kāmyānāṃ tri-vargasya ca yo vidhiḥ

अर्थ: समस्त प्राणी किस प्रकार उत्पन्न होते हैं, स्थित रहते हैं, तथा नष्ट होते हैं; वैदिक अनुष्ठानों तथा स्मृति-ग्रन्थों में अनुशंसित पुण्य-कर्मों के सम्पादन की समुचित रीति क्या है; और धर्म, अर्थ, तथा काम — इन तीनों को साधने का उचित, दोषरहित उपाय क्या है? (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 21)



राजा तत्त्वों, पतञ्जलि के अष्टांग योग, तथा वेद, धर्मशास्त्र, इतिहास एवं पुराणों में समाहित महान् पवित्र ज्ञान के विषय में पूछते हैं (श्लोक 19-21)।

बन्धन, मुक्ति, तथा भगवान् की अपनी माया

राजा के अन्तिम प्रश्न-समूह सबसे गहन रहस्य की ओर पहुँचते हैं। वे पूछते हैं, महाप्रलय के समय — ब्रह्मा के जीवन के अन्त में होने वाला महान् संहार — जिन आत्माओं की व्यक्तिगत सत्ता प्रकृति में विलीन हो जाती है, वे सृष्टि पुनः आरम्भ होने पर पुनः शरीर कैसे धारण करती हैं? पाखण्ड-मत संसार में किस प्रकार प्रकट होता है? और वास्तव में, आत्मा का बन्धन, उसकी मुक्ति, तथा उसका अपने वास्तविक स्वरूप को साकार करना — इसका क्या अर्थ है?

यो वानुशायिनां सर्गः पाषण्डस्य च सम्भवः ।

आत्मनो बन्धमोक्षौ च व्यवस्थानं स्वरूपतः ॥ २२ ॥

yo vānuśāyināṃ sargaḥ pāṣaṇḍasya ca sambhavaḥ ātmano bandha-mokṣau ca vyavasthānaṃ sva-rūpataḥ

अर्थ: संहार में विलीन आत्माओं की पुनः सृष्टि कैसे होती है, तथा पाखण्ड कैसे उत्पन्न होता है? आत्मा का बन्धन क्या है, तथा उसकी मुक्ति क्या है, तथा उसका अपने वास्तविक स्वरूप में स्थापित होना क्या है? (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 22)

और अन्त में, वह प्रश्न जो पूर्व के सभी प्रश्नों को एक ही गाँठ में समेट लेता है: भगवान्, जो पूर्णतः स्वतन्त्र तथा सर्वव्यापी हैं, अपनी ही माया के साथ कैसे क्रीड़ा करते हैं — तथा उस माया को त्यागने के पश्चात्, वे एक निरपेक्ष साक्षी की भाँति कैसे अलग खड़े रहते हैं?

यथात्मतन्त्रो भगवान् विक्रीडत्यात्ममायया ।

विसृज्य वा यथा मायामुदास्ते साक्षिवद् विभुः ॥ २३ ॥

yathātma-tantro bhagavān vikrīḍaty ātma-māyayā visṛjya vā yathā māyām udāste sākṣivad vibhuḥ

अर्थ: पूर्णतः स्वतन्त्र होने के कारण, सर्वव्यापी भगवान् अपनी इच्छानुसार अपनी ही माया के साथ क्रीड़ा करते हैं; तथा उसी माया को त्यागकर, वे उससे पूर्णतः पृथक्, एक निरपेक्ष साक्षी की भाँति खड़े रहते हैं। (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 23)

यह सम्पूर्ण प्रश्नावली प्रस्तुत करने के पश्चात्, परीक्षित शुक से अनुरोध करते हैं कि वे इन सबका उत्तर, एक के पश्चात् एक, ठीक उसी प्रकार दें जैसे पूछा गया है, क्योंकि वे एक ऐसी आत्मा के रूप में उनके पास आए हैं जिसने उनके चरणों की शरण ली है, तथा क्योंकि शुक स्वयं ब्रह्मा के समान ही इन विषयों के प्रामाणिक ज्ञाता हैं — उन अन्य लोगों के विपरीत जो बिना जाँचे-परखे केवल वही अनुसरण करते हैं जो उनके पूर्वजों ने किया था।

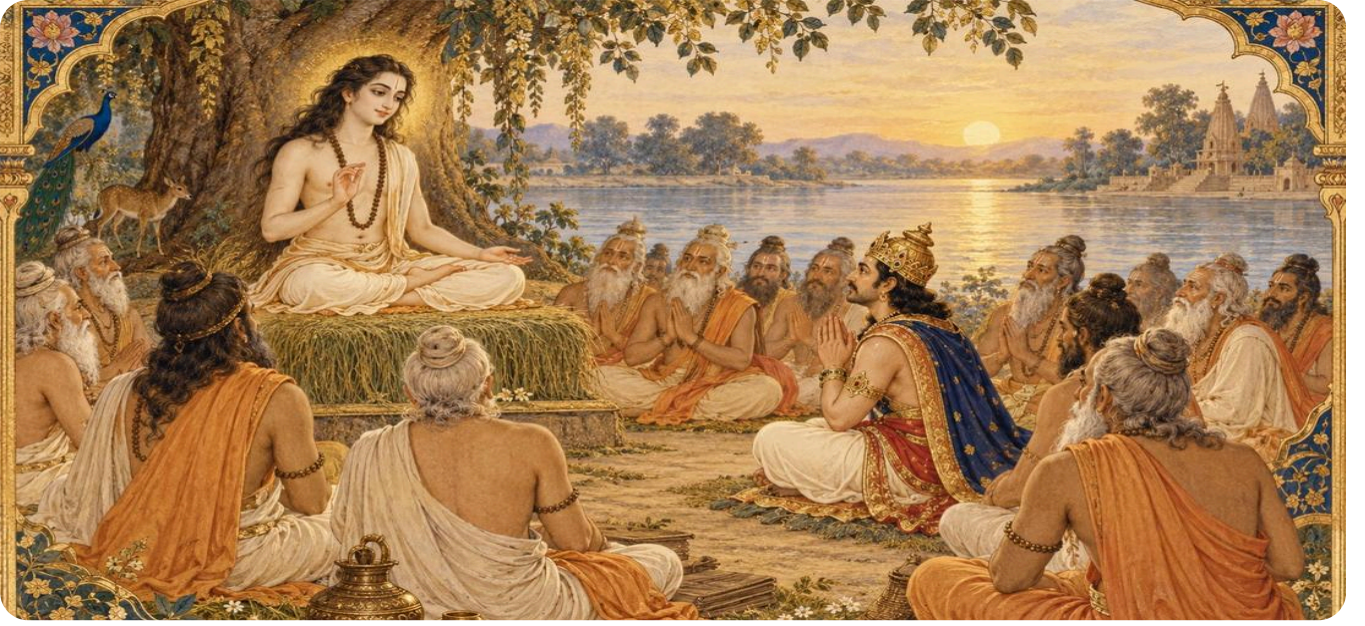
तत्पश्चात् राजा एक शान्त, हृदयस्पर्शी आश्वासन देते हैं: उनका जीवन, वे कहते हैं, उस युवा ब्राह्मण के शाप से समाप्त होने के भय में नहीं है, जब तक वे अन्न त्यागना जारी रखते हुए, इसके स्थान पर, शुक के मुख से मानो शब्दों के सागर से उमड़ते हुए, अच्युत भगवान् की कथाओं का अमृत पान करते रहेंगे।

न मेऽसवः परायन्ति ब्रह्मन्नशनादमी ।

पिबतोऽच्युतपीयूषम् तद्वाक्याब्धिविनिःसृतम् ॥ २४ ॥

na me 'savaḥ parāyanti brahmann anaśanād amī pibato 'cyuta-pīyūṣam tad vākya-abdhi-viniḥsṛtam

अर्थ: हे विद्वान् ब्राह्मण, मेरा यह प्राण केवल उपवास से नहीं निकलेगा, जब तक मैं आपके शब्दों के सागर से प्रवाहित होने वाले अच्युत भगवान् की कथाओं के अमृत का पान करता रहूँगा। (स्कन्ध 2, अध्याय 8, श्लोक 26)



इस प्रकार आमन्त्रित होकर प्रसन्न हुए ऋषि शुक, वही भागवत-पुराण कहना आरम्भ करते हैं जो कभी भगवान् ने ब्रह्मा को सिखाया था, तथा परीक्षित के समस्त प्रश्नों का क्रमशः उत्तर देने का संकल्प लेते हैं (श्लोक 27-29)।

शुक की मौन स्वीकृति

अध्याय का समापन किसी उत्तर से नहीं, अपितु उत्तर की प्रतिज्ञा से होता है। सूतजी नैमिषारण्य के ऋषियों को बताते हैं कि इस प्रकार परीक्षित द्वारा आमन्त्रित शुक — जिन्हें एक बार, अजन्मे शिशु के रूप में, स्वयं भगवान् विष्णु ने अपनी माता के गर्भ में रक्षा प्रदान की थी — अत्यन्त प्रसन्न हुए, और वही भागवत-पुराण कहना आरम्भ किया जो भगवान् ने ब्रह्मकल्प के आरम्भ में स्वयं ब्रह्मा को सिखाया था, वह शिक्षा जो वेदों के समान ही आदरणीय मानी जाती है। उन्होंने पाण्डु-वंश में अग्रगण्य परीक्षित द्वारा पूछे गए प्रत्येक प्रश्न का, एक के पश्चात् एक, यथाक्रम उत्तर देने का कार्य आरम्भ किया। इस शान्त मोड़ के साथ अध्याय समाप्त होता है, और भागवत की शेष शिक्षा का महान् प्रकटीकरण गति पकड़ता है।

इस अध्याय की मुख्य शिक्षाएँ

1. एक मरणासन्न राजा की जिज्ञासा हमारी विरासत बन जाती है। परीक्षित यहाँ काल, ब्रह्माण्ड, योग, शास्त्र, तथा मुक्ति के विषय में जो भी प्रश्न पूछते हैं, वह सब भागवत के शेष भाग द्वारा धैर्यपूर्वक प्रकट किए जाने वाली शिक्षा की प्रतिज्ञा बन जाता है (श्लोक 1-24)।
2. श्रवण तथा कीर्तन हृदय को शुद्ध करते हैं। भगवान् उस व्यक्ति के हृदय में कान के मार्ग से प्रवेश करते हैं जो प्रतिदिन उनकी कथाएँ सुनता तथा सुनाता है, उसे मलिनता से वैसे ही शुद्ध करते हैं जैसे शरद ऋतु गँदले जल को निर्मल करती है (श्लोक 4-6)।
3. विराट् पुरुष का स्वरूप मनुष्य के समान है, फिर भी अपरिमेय है। भगवान् का वह स्वरूप, जिसे साधारण मानवीय शब्दों में वर्णित किया गया है, अपने अंगों में समस्त चौदह लोकों को समाहित करता है — एक ऐसा रहस्य जिसे परीक्षित विशेष रूप से और अधिक खोलने का अनुरोध करते हैं (श्लोक 8-11)।
4. पवित्र ज्ञान की प्रत्येक शाखा एक ही समग्रता से सम्बद्ध है। काल, ब्रह्माण्ड-विज्ञान, युग, अवतार, कर्तव्य, तत्त्व, योग, तथा वेद एवं पुराण परीक्षित के लिए पृथक् विषय नहीं हैं — ये भगवान् को जानने के एक ही आवेगपूर्ण प्रश्न के विभिन्न पहलू हैं (श्लोक 12-21)।

5. भगवान् की कथाओं का अमृत ही जीवन को धारण करता है। परीक्षित के समापन-वचन प्रकट करते हैं कि यह सम्पूर्ण अध्याय वास्तव में किस विषय में है: सूचना नहीं, अपितु श्रीकृष्ण की कथाएँ सुनने की वह धारण-शक्ति देने वाली मधुरता, जिस पर वे अन्न से भी अधिक विश्वास करते हैं ताकि उनके प्रश्नों का उत्तर मिलने तक जीवित रह सकें (श्लोक 26)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में कुछ गहराई से मानवीय है, सम्भवतः इससे पूर्व आए किसी भी ब्रह्माण्डीय वर्णन से भी अधिक। मृत्यु से कुछ दिन दूर एक राजा एक सावधान प्रश्न पूछकर उसके उत्तर की धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा नहीं करता — वह सब कुछ उड़ेल देता है: आत्मा तथा शरीर के विषय में सन्देह, काल तथा अन्तरिक्ष के विषय में जिज्ञासा, भगवान् के अवतारों की कथाएँ सुनने की लालसा, योग तथा शास्त्र में लगभग विद्वत्तापूर्ण रुचि, और इन सबके नीचे, यह सीधी स्वीकारोक्ति कि अन्न अब उन्हें उतना पोषण नहीं देता जितना पवित्र शब्द देते हैं। हम में से शायद ही कोई कभी, परीक्षित की भाँति, किसी नदी के तट पर अपने अन्तिम सात दिनों की गिनती करते हुए बैठेगा। किन्तु हम सभी उनकी उस भूख का कोई-न-कोई रूप वहन करते हैं — यह भाव कि काल, कर्तव्य, तथा आत्मा के विषय में हमने जो सामान्य उत्तर स्वीकार कर लिए हैं वे पर्याप्त नहीं हैं, और कहीं-न-कहीं एक अधिक सम्पूर्ण सत्य प्रतीक्षा कर रहा है कि उसे सीधे माँगा जाए। परीक्षित का उदाहरण वास्तव में उनके बीस-से-अधिक प्रश्नों की विषय-वस्तु के विषय में नहीं है; यह उस साहस तथा उत्कण्ठा के विषय में है जिसके साथ वे उन्हें पूछते हैं, यह अनुमति न देते हुए कि शिष्टाचार अथवा अज्ञानी दिखने का भय उनके तथा उस ऋषि के बीच खड़ा हो जो उन्हें उत्तर दे सकता है। सम्भवतः सच्ची भक्ति ठीक वहीं से आरम्भ होती है — स्वयं को, अन्ततः, पूछने की अनुमति देने में।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, कुछ शान्त क्षण निकालिए और, परीक्षित की भाँति, स्वयं को मान लेने के स्थान पर पूछने की अनुमति दीजिए। अपने जीवन अथवा दिव्य सत्ता के विषय में अपनी समझ के बारे में कोई एक ऐसा प्रश्न मन में लाइए जिसे आपने लम्बे समय से अनकहा छोड़ा है — उसका तत्काल उत्तर देने के लिए नहीं, अपितु केवल उसे भगवान् के समक्ष ईमानदारी से नाम देने के लिए। फिर, यह स्मरण करते हुए कि परीक्षित ने पाया कि श्रीकृष्ण की कथाओं ने उन्हें अन्न से भी बेहतर पोषण दिया, कुछ मिनट भगवान् की कृपा की एक कथा पढ़ने अथवा स्मरण करने में व्यतीत कीजिए, और उसे अपने हृदय में उसी प्रकार बैठने दीजिए जैसे राजा शरद ऋतु द्वारा तालाब के गँदले जल को निर्मल किए जाने का वर्णन करते हैं। समापन में शान्तिपूर्वक कुछ बार दोहराइए: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।”

उपसंहार

द्वितीय स्कन्ध का अष्टम अध्याय, सच्चे अर्थ में, विशुद्ध जिज्ञासा का अध्याय है। यहाँ कुछ भी सुलझाया नहीं गया है; यहाँ सब कुछ खोला गया है। राजा परीक्षित, मृत्यु की निकटता का अनुभव करते हुए, तथा ब्रह्मा के सृष्टि-वर्णन की विशालता की मात्र एक झलक पाकर, अपने प्रश्नों को अनपूछे छोड़कर मरने से इनकार करते हैं। वे जानना चाहते हैं कि भागवत कैसे कहा जाने लगा, एक आत्मा को अपने अन्तिम क्षण का सामना कैसे करना चाहिए, आत्मा अपने ही स्वरूप को क्यों भूल जाती है, विराट् पुरुष अपने अंगों में समस्त लोकों को कैसे धारण करते हैं, काल तथा कर्म वास्तव में कैसे कार्य करते हैं, युगों तथा अवतारों का क्या अर्थ है, कर्तव्य प्रत्येक प्रकार के व्यक्ति से क्या माँगता है, योग क्या वचन देता है तथा कहाँ ले जाता है, महान् शास्त्र क्या धारण करते हैं, और अन्ततः, बन्धन तथा मुक्ति तथा भगवान् की अपनी क्रीडामय माया एक-दूसरे में कैसे समाहित हैं। उत्तर में, शुक उपदेश नहीं देते — वे केवल शान्तिपूर्वक तथा आनन्दपूर्वक, वही भागवत कहने की स्वीकृति देते हैं जो भगवान्

ने कभी ब्रह्मा को सिखाया था। एक अर्थ में, शेष सम्पूर्ण शास्त्र शुक द्वारा इसी एक प्रतिज्ञा को निभाना है। और इस अध्याय के समापन-दृश्य में — एक मरणासन्न राजा को अन्न में नहीं, अपितु भगवान् की कथाओं के अमृत में जीवन मिलता हुआ — हमें, एक भी प्रश्न का उत्तर मिलने से पहले ही, उन सबकी सबसे गहन शिक्षा प्राप्त हो जाती है।

श्रीमद्भागवत की दिव्य ज्ञान-ज्योति हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

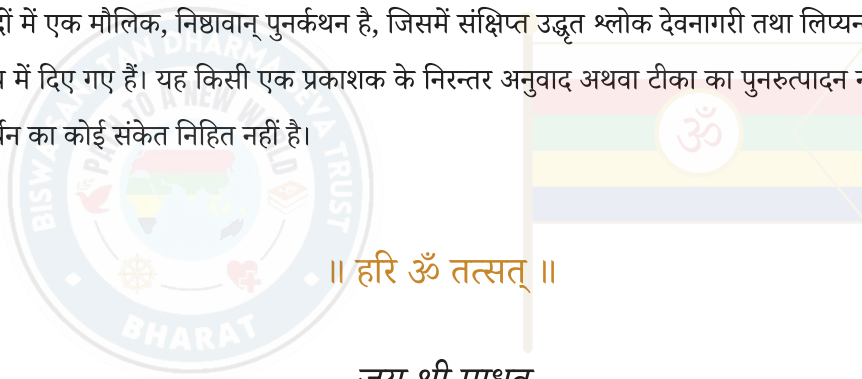
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), द्वितीय स्कन्ध, अष्टम प्रवचन, पृष्ठ 119–122।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र जी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा का अनुसरण करते हुए प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक से सम्बद्धता अथवा समर्थन का कोई संकेत निहित नहीं है।



॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-2-adhyay-8-parikshit-ke-prashna.html

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट